Do pehlu [Hindi]

Nikhil Kumar

2nd semester, BSc Radiography, University College of Medical Sciences
Corresponding Author:
Nikhil Kumar
UCMS, Delhi, 110095, India
Email: nk9560514918 at gmail dot com

Received: 14-APR-2020 Accepted: 16-APR-2020 Published Online: 17-APR-2020

एक बार फिर कुदरत के आगे हार रहा इंसान है,
ना गलियों में ही रौनक है अब,
ना शहरो में ही बाकी जान है,
खेलते हुए देखा था मैंने,
कल एक बचपन अपनी आँखों से,
थे जिसके कुछ ऐसे ख्वाब,
जो बयान न कर पाऊँगा शायद,
मैं आज अपनी बातों से,
बंद हो चुकी उसकी आँखों में मैंने,
टूटे ख़्वाबों को बहते देखा है,
बंद हो चुकी साँसों की उसकी,
खामोशियों को कहते देखा है,
सिक्के को अपने दोंनों पहलू,
आज फिर आज़माते हुए देखा है,
पिंजरों में बंद पंछियों को,
फिर पंख फैलाते देखा है,
कुछ हो रहे हैं बर्बाद यहाँ पर,
तो कुछ को आज़ादी का जश्न मनाते देखा है,
मानता नहीं था मैं खुदा को आज तक यूँ तो,
पर आज खुदा को भी खुद,
लोगों की जान बचाते देखा है,
यूँ तो हर बार मज़हब के नाम पर,
बंट ही जाते हैं लोग अक्सर,
पर इस मुश्किल वक़्त में पहली बार हर किसी को,
बस इंसानियत का फर्ज़ निभाते देखा है।

Acknowledgment: This poem was submitted to "Lockdown Diaries: The COVID Contract" hosted online by Parwaaz, the poetry society of University College of Medical Sciences, Delhi, in April 2020

Cite this article as: Kumar N. Do pehlu [Hindi]. RHiME. 2020;7:40.